UNIVERSAL LIBRARY
OU_180419
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6/B57Ba Accession No. G.H.1452

Author भटनागर, महेन्द्र।

Title बदलता युग।1953

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकाशक

श्री दीनानाथ बुक डिपो

खजूरी बाजार,

इन्दौर (म. भा.)

प्रथम-बार

मूल्य १॥)

मुद्रक

पीयूषधारा फाइन आर्ट प्रेस,

गांधी-भवन, यशवन्त रोड,

इन्दौर (म. भा.)

आमुख

'बदलता युग' में मेरी तैंतालीस कविताएं संग्रहीत हैं। प्रकाशन की दृष्टि से यह तीसरा कविता-संग्रह है। 'टूटती शृंखलाएं' (रचना-काल सन् १९४४–४८) के बाद प्रस्तुत पुस्तक काव्य प्रेमियों के समक्ष रख रहा हूँ। 'बदलता युग' की अधिकांश कविताएं भारत के राष्ट्रीय इतिहास से सम्बन्ध रखती हैं। यह इतिहास मेरे युग का इतिहास है; जिसमें घटने वाली अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं तथा परिवर्तनों के प्रति मेरा कवि विशेष रूप से जागरूक रहा है। यह मेरा सौभाग्य है कि मैं ऐसे समय में जन्मा जबकि भारतीय इतिहास में ही महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुए वरन् सर्वत्र एक जमाना ही बदल गया। इस बदलते हुए युग के बीच प्रगतिशील परम्पराओं को प्यार करने वाला कवि तटस्थ नहीं रह सकता। कवि सामाजिक प्राणी होने के नाते अपने समय की गतिविधियों से न कभी विलग रहा है और न रह सकता है। अपने समय की अनेक परिस्थितियों का उसे भी सामना करना पड़ता है। प्रस्तुत संग्रह की कविताओं की यही मनोभूमि है। प्रत्येक कविता का रचना-काल देने में मैं असमर्थ हूं, क्योंकि प्रस्तुत संग्रह अनायास ही बन गया। अधिकांश कविताएं ऐतिहासिक घटनाओं से सम्बन्ध रखती हैं अतः वे अपना रचनाकाल स्वयं घोषित कर रही हैं। शेष कविताओं के बारे में केवल इतना ही कहा जा सकता है कि उनमें कुछ 'टूटती शृंखलाएं' के पूर्व की हैं, कुछ समकालीन और कुछ बाद की।

आज की हिन्दी-कविता 'प्रगति' और 'प्रयोग' के दृष्टिकोणों से देखी जाती है। मैं प्रयोग करता हूं, यद्यपि प्रस्तुत-संग्रह में उनका अभाव है, लेकिन प्रयोग से मेरा अभिप्राय उन प्रयोगवादियों से भिन्न

हैं जो प्रयोग के चमत्कारिक प्रदर्शनों से साहित्य की जनवादी विचार-धारा को दबा रहे हैं। प्रयोगों का सामाजिक सम्बन्ध होना अनिवार्य है। प्रगतिशील दृष्टिकोण से जन-जीवन के भावों की अभिव्यक्ति यदि नाना रूपों में की जाती है तो वह एक स्वस्थ और जीवनदायी परम्परा कही जाएगी। मैं यह देख रहा हूँ कि हिन्दी के अनेक प्रगतिशील-जनवादी कवियों में आज वह तेजी नहीं रही जो पहले थी। उनमें से बहुत से प्रयोग शैली के भंवर में फंसकर जनवादी परम्पराओं से दूर होते जा रहे हैं। उनकी कविताएं दुरूह, कलाहीन, अप्रभावशाली होती जा रही हैं। मैं जहां कविता में नए-नए प्रयोगों का समर्थक हूँ वहां दूसरी ओर उसके विचार-पक्ष में प्रगतिशील दर्शन की छाया भी देखना चाहता हूं; तभी कविता राष्ट्रीय तथा सामाजिक चेतना दे सकेगी, ऐसा मेरा विश्वास है; अन्यथा वह थोड़े से व्यक्तियों की चीज बनकर रह जाएगी और उसका सृष्टा युगधर्म निभाने में असफल रहेगा।

धार (म० भा०)
१, मई १९५३

महेन्द्र भटनागर

भूमिका

'बदलता युग' श्री महेन्द्र भटनागर का तीसरा काव्य-संग्रह है। इससे पहले आपकी कविताओं के संकलन 'तारों के गीत' और 'टूटती शृंखलाएं' और स्केच-संग्रह 'लड़खड़ाते कदम' हमारे सामने आ चुके हैं। श्री महेन्द्र भटनागर हिन्दी के सुपरिचित कवि और लेखक हैं। कुछ ही वर्षों में आप काफी यश और ख्याति अर्जित कर चुके हैं। आपका नाम उन जागरूक कलाकारों में प्रमुख है, जिनका भविष्य हम आशा और विश्वास से देखते हैं। अगले वर्षों में हिन्दी-कविता की विभूतियों में महेन्द्रजी का गौरवपूर्ण स्थान होना चाहिए।

आपका द्वितीय कविता-संग्रह 'टूटती-शृंखलाएं' हिन्दी के प्रगतिशील गीत-काव्य को महत्वपूर्ण देन है। इन कविताओं में संगीत के साथ मानव-मुक्ति की आकांक्षा प्रबल स्वर में प्रगट हुई है। इस संग्रह की सर्वप्रथम कविता 'सदियों बाद' में आप कहते हैं—

सदियों बाद मिटा तम का नभ,
चमका नव-संसृति में प्रभात,
बीती युग-युग की मृत्यु रात
डोला मधु-पूरित मलय-वात !

सदियों बाद उठी है आंधी
कर आज दिशाएं मटमैली,
धूल क्षितिज में अहरह फैली
शक्ति विरोधी—पंगु अकेली !

इसी प्रकार 'नई दुनिया' नाम की कविता में आप लिखते हैं—

तुम आज विचारों के बल से
जन रच दो दुनिया एक नई !

यह उजड़ा वेश धरा का तो,
यह ग्रहण लगा नभ राका तो,
आंखों को लगता बुरा-बुरा
पीली मानों प्राचीन सुरा,
तुम आज सृजन की घड़ियों में
जन रच दो दुनिया एक नई !

'टूटती शृंखलाएं' में एक उल्लास और उन्मुक्त भावना थी। नए संग्रह में जीवन की क्रूरता और उसके गहन अन्धकार की भावना सबल है। कवि मानों ऊंचे स्वर में गाकर अपने आत्मबल और विश्वास को दृढ़ करना चाहता है—

गिर नहीं सकती कभी विश्वास की दीवार !
निर्मित तप्त जन-जन के लहू से,
नींव के नीचे पड़े
कातर अनेकों मूक जन-बलिदान !
यह विश्वास जीवन के नए भवितव्य का
धुंधला नहीं निस्सार !

'बदलता युग' की अनेक कविताएँ अकाल और साम्प्रदायिक दंगों की पृष्ठभूमि में लिखी गई है, इसीलिए उनमें विनाश और क्रन्दन के स्वर प्रधान हैं। 'तूफान' नाम की कविता में कवि ने लिखा है—

मिटा समुदाय सारा खा गया है जंग,
दीमक और फोड़ों से
हुआ जर्जर, हुआ जर्जर !
बिगड़ दोनों गये हैं लंग्स !

कवि कहता है--

दशा युग की करुण है, आज वाणी में नहीं बंधती !
नहीं बँधती, विषम है साधना स्वर में नहीं सधती !

इस संग्रह की कविताओं में 'नौ सैनिक विद्रोह' 'बंगाल का अकाल' 'जय-हिन्द', 'हम एक हैं,', 'संयुक्त बनो', 'धरती की पुकार' आदि सबल, मर्मस्पर्शी रचनाएं हैं। इन कविताओं में यह विश्वास दुहराया गया है कि तम की घनी चादर आकाश से हटकर ही रहेगी, अन्धकार का विनाश कोई रोक नहीं सकता ! वह लिखता है--

घेर रहा है जग को प्रतिपल
उठता जड़ता का काला तम,
बढ़ता जाता है जीवन में
अतिशय क्रन्दन, अतिशय विभ्रम,
छाते जाते अविरल नभ में
काले भयग्रस्त अमा-से घन,
गतिहीन अनियन्त्रित आज बना
निष्प्राणित, अपमानित जीवन !

अन्त में वह कहता है--

किसने इस क्षण आभा को
कर म्लान, अंधेरे से मन जोड़ा,
अक्षय संचय जिससे रह-रह
कर होता जाता है थोड़ा !
जूझो युग के सजग पथिक तुम,
थक जाने का अवसर न अरे,
नाविक विधि सोचो ऐसी
जिससे यह युग-नौका आज तरे !

श्री महेन्द्र हिन्दी-कविता के नये प्रतिनिधि सजग कवियों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनकी सामाजिक चेतना प्रखर और तीव्र है। उनकी भाषा मंजी और प्रवाहमान है। उनके काव्य का संगीत आकर्षक और हृदयग्राही है। कहीं-कहीं नवीन उपमाओं को लाने और संगीत को भग्न करने का प्रयास भी हम देखते हैं। यह रूपवाद के प्रति आकर्षण का लक्षण है। श्री महेन्द्र का प्रमुख गुण गीति-मत्ता है। अयास ही उनकी वाणी ताल और लय में फूट पड़ती है। श्री महेन्द्र छोटे-छोटे गीत बड़ी सुन्दरता से लिखते हैं। उनके काव्य की माला में ये गीत मोतियों की तरह झलमलाते हैं। 'मिटाते चलो' और 'जय हिन्द' ऐसे ही गीत हैं।

'बदलता युग' में नई पीढ़ी के एक सचेत कवि का क्रन्दन और विद्रोही-उन्मुक्त-स्वर हमें मिलता है। यह आधुनिक हिंदी-कविता की स्वस्थ जन-वादी परम्परा की एक नई कड़ी है। हम इस संग्रह का स्वागत करते हैं, और हमें विश्वास है कि कवि की लेखनी से गीत की निर्झरणी इसी प्रकार अजस्त्र वेग से निरन्तर बहती रहेगी।

प्रयाग,
१०, मई १९५३

प्रो० प्रकाशचन्द्र गुप्त

—: तारतम्य :—

		पृष्ट सं.
१	गिर नहीं सकती...	२
२	मिटाते चलो	३
३	कुर्बानियां	४
४	तूफान	७
५	सर्वनाश	९
६	बंगाल का अकाल	११
७	नौ सैनिक विद्रोह	१४
८	जय-हिन्द	१७
९	विकल है देश	१८
१०	साम्प्रदायिक दंगे... ...	१९
११	आजाद मस्तक को उठा लेता	२१
१२	दमित नारी	२४
१३	साम्प्रदायिक विष	२६
१४	हम एक है	२८
१५	एकता	३०
१६	हिन्दू मुसलमान...	३१
१७	संयुक्त बनो	३२
१८	विवषता मे	३६
१९	युध्द क्षेत्र पर	३८
२०	देशी रजवाड़े	३९
२१	मलान सावधान...	४१

२२	अफसोस है	४३
२३	विरोधी शक्तियां	४४
२४	मिल मजदूर	४६
२५	शराबी	४६
२६	शराबी से	५०
२७	सोओ नहीं	५१
२८	निश्चिन्त भी, भयभीत भी	५२
२६	जनवाणी	५३
३०	बदलता युग	५५
३१	नया प्रकाश	५६
३२	आज तो	५७
३३	बदल रही है	५८
३४	मुस्कान के रंग	५६
३५	मेरे देश में	६०
३६	रक्षा	६१
३७	धरती की पुकार...	६३
३८	मालवा में अकाल	६५
३६	अमन की रोशनी...	६७
४०	जंगबाज	६६
४१	नई नारी	७०
४२	मुक्ति पर्व	७२

★

बदलता युग

गिर नहीं सकती

गिर नहीं सकती कभी विश्वास की दीवार !
निर्मित तप्तजन-जन के लहू से,
वज्र-सी, फौलाद-सी दृढ़ हड्डियों से,
नींव के नीचे पड़े
कातर अनेकों मूक जन-बलिदान !
यह विश्वास जीवन के नए भवितव्य का
धुधला नही निस्सार !
गिर नही सकती कभी अगणित प्रहारो से
नए विश्वास की दीवार !
वर्षो बाद की निविड़ान्धकार सुरग
जन-चेतना की शक्ति से द्युतिपार,
ज्योतिर्मय हुआ संसार,
धधका सत्य का अगार,
लोहे-सी खडी जन-शक्ति की दीवार !
त्रस्त-शोषित--सर्वहारा-वर्ग रक्षा के लिए
अपना उठाये सिर
चुनौती दे रही उसको—
सतत साम्राज्य-लिप्सा-रक्त-नद में
वर्ग जो डूबा हुआ ।
वह गिर नही सकती कभी
जन-संगठित-बल की नई दीवार !
टकरा लौट जाएगी विरोधी धार !
बारम्बार लुंठित, खा करारी हार !

मिटाते चलो

सदियों के बंधन मिटाते चलो तुम,
तम के ये परदे हटाते चलो तुम,
अवरुद्ध राहों के पत्थर सभी ये
निर्झर सदृश सब उड़ाते चलो तुम।

विष दानवों का पिलाया गया जो,
शोषण का कोल्हू चलाया गया जो,
असफल सभी नीति ऐसी करो—
जिससे उठे सिर, दबाया गया जो।

जन-युग समर्थक, प्रजातन्त्र का बल
शत-शत स्वरों से यह गुंजित हो प्रतिपल,
जनपद जगे ले विजय की मशालें
श्रम के अभावों के फटते हों बादल।

कुर्बानियां

विश्व के परतन्त्र देशों की
जटिल दृढ शृंखलाएं टूटने को
आज झन-झन बज रही है !
आज प्रतिक्षण रण,
अमित कुर्बानियां स्वातन्त्र्य हित
प्रतिपल मचल कर हो रही है !
सिर्फ मरघट में चिताएं है शहीदों की,
नहीं ज्वाला बुझी,
धू-धू भयंकर और भीषण
हो रही है, जल रही है,
बढ रही है !
यह उमड़ता ज्वार जनता का
कहीं पर रुक सका है ?
स्वर—
अवनि गिरते हुए तारक सरीखा,
क्या किसी भी घोर रव से दब सका है ?
युद्ध की आवाज,
एटम बाम्ब का है नाम,
पर ललकार—
इण्डोनेशिया छोड़ो,
भगो बर्मा व हिन्दुस्तान छोड़ो !
एशिया क्या—
विश्व के लघु राष्ट्र सारे,
एक बिगड़े सिंह जैसे जग उठे है !

एक घायल सांप जैसे
फन उठाये दीखते हैं !
अन्त है फासिज्म का,
औ' नष्ट होने जा रही है
विश्व की साम्राज्यवादी शक्तियां !
शोषण दमन का चक्र
जो अगणित युगों से चल रहा था,
आंख मींचे
फेक्टरी के बॉयलर में
कोयले के स्थानपर
श्रम जीवियों के, शोषितों के,
पद दलित नत नीग्रों के
प्राण झोके जा रहे थे
स्वार्थ–लोलुप–देश निर्दय !
आज वे सब
फड़फड़ा कर उठ रहे हैं !
घृणित दुखदाई हुकूमत को
पलटने उठ रहे हैं !
जो खड़े इनके शवों पर
तुच्छ रजकण से गए बीते समझकर
और बन कर बेरहम
करते रहे मर्दित पदों से,
लड़खड़ा कर गिर रहे हैं
एक करवट से !
उठे अब धूल से औ' रक्त से रंजित
चाहते अधिकार,

आजादी, व्यवस्था ।
पतित मानव की प्रगति का चित्र सुन्दर,
रूप अभिनव ।
साम्य का संगीत गूंजे,
रोक बन कर जो खड़े है
आज तूफानी प्रबल आघात,
विप्लव ज्वाल,
प्रतिपल दृढ हथौड़े से
निरंतर चोट खाकर,
एक पल मे बुद्बुदों से,
आह भर मिट जाएंगे ।
ध्रुव सत्य—
जनता की विजय ।
संक्रान्ति के जो इन क्षणो में
छा रही जड़ता, निराशा
वह नहीं वातावरण होगा,
प्रगति की आश का दुर्दम प्रभंजन
विश्व के पीडित उरों में
दौड़ जाएगा प्रखर बन ।

तूफान

समय संक्रांति का,
असफल निराशा का,
अधूरे स्वप्न ले मानव,
अधीर अशांति में प्रतिपल
विकल साँसें, दमन के दिन
रहे हैं गिन, रहे हैं गिन ।
मिटा समुदाय सारा खा गया है जंग,
दीमक और फोड़ों से
हुआ जर्जर, हुआ जर्जर !
बिगड़ दोनों गये हैं लंग्स ।
हिंसक और भक्षक व्यक्ति का भीषण,
शुरू अब हो गया है नाच, नंगा नाच !
जिसके पैर के नीचे मनुजता का दबा है वक्ष,
क्रन्दन की पुकारें और आहें
बन रही तबलें-मजीरों की धमक,
निर्दय कुचलता जा रहा है आज !
पैरों से मसलता जा रहा है आज !
दोनों हाथ जो अपने
डुबोकर रक्त में होली मनाए,
क्रूर भूतों सी हँसी हंसता
ज़मीं पर वार कर हरबार
निर्मम बन गिराता है रुधिर की धार !
सारा लाल है संसार !
सारा चीखता संसार

रो–रो आह भरकर आज !
देखो बढ़ रहा तूफान !
करने विश्व को आजाद,
देने को नया जीवन,
बसाने साम्य की दुनिया
मिटाने दुःख की घड़ियां !
युगों की सख्त काली लौह की कडियाँ
बजी झन-झन, बजी झन-झन !
हुई सब ग्रन्थियां ढीली, खुले बन्धन !
कि बोला अब नया इंसान–
'जनता राज जिन्दाबाद,
जनता को मिले अधिकार !'
सारे विश्व में स्वातन्त्र्य झंझावात–
बहता तोड़ता प्राचीन-चिन्तन बाँध,
राजा, काल्पनिक भगवान, डिक्टेटर
हुकूमत के ज़माने के कफन पर
कील अन्तिम ठुक चुकी है आज ।
जीवन जागरण के गान के स्वर
विश्व के प्रत्येक कोने से
सुनाई दे रहे हैं आज !
आया मुक्ति का तूफान !
पूरे हो रहे अरमान ! अभिनन्दन !!
प्रगति की शक्तियां सारी तुम्हारे साथ !
दुर्दम मुक्ति का तूफान !
निश्चय जीत का वरदान !
बढ़ता आ रहा तूफान !

सर्वनाश

हिल गया तल तक
कि चारों ओर,
चीखा जन-समुन्दर घोर !
कण-कण ध्वस्त पर
क्रोधित हुए हैं लाल भीषण नेत्र,
जन-जन का उबलता खून,
हिंसक बन गए कानून;
सम्मुख क्रूरता—नर्तन
पतन का आज चरमोत्कर्ष
भीषण दानवी संघर्ष, है दुर्द्धर्ष !
दुर्बल बाहुओं में शक्ति का सचार,
नूतन वेग !
दृढ़ इमान जम कर
छीनता अधिकार,
स्वर युग—धर्म का गूंजा,
मनुज सन्मुख प्रहारों से बिगड़ जूझा,
सबल 'ग्रेनाइट' से बंधन झुके,
रजमेड़ से टूटे बहे
'लोयस' सदृश !
(जिसका न बस,
आ चीर दे कोई,
उड़ा दे देह—बहता जल,
मृतक सा मेह !)
घना कुहरा समाया दिग-दिगन्तों में,
कि चारों ओर, आये घोर

दृग को बन्द करते, अंध,
क्रोधित बन गरजते घन
घुमड़ते हैं, उमड़ते हैं,
कि दुर्दम साथ में तूफान भी आया !
पकड़ लो प्राण मेरे हाथ,
दुर्गम पंथ से चलकर
भयंकर नाश का सामान लाया आज
यह तूफान !
कहते कापुरुष है डर
कि है सब व्यर्थ
सारी शक्ति, साहस अर्थ !
यह क्षण में कुचल देगा,
अभी देंगे दिखाई हम
अवनि लुंठित, धराशायी !
हमारी चीख की आवाज भी देगी
नहीं बिलकुल सुनाई ।
क्योंकि ये हुंकारते हैं मेघ,
भीषण सनसनाती आंधियां,
काले क्षितिज पर
कड़कड़ाती बिजलियां.
औ' शीत की तलवार-सी है धार,
जिसमें सब जकड़ कर, हिम खोकर चेतना
जड़वत् बना निष्क्रिय
हमारे प्राण का कंपन !
हमारी धमनियों का रक्त !

बंगाल का अकाल

बग भू पर हो रहा क्रदन-मरण व्याकुल स्वरों में !
घुल रहे हैं किस तरह
विद्रोह रोके निर–बुभुक्षित,
होश मे है मौन मुर्दे
आज रोते क्यों मरण हित ?
वृंतच्युत कोमल तड़पते
भूख से शिशु–प्राण अबुज,
पेट के खातिर यहां
सर्वस्व नारी बेचती निज,
और हैजा दीखता है
आज कितने ही नगर में,
हैं बिछी अगणित कतारें
हाय लाशों की डगर में,
तड़पते अरमान इनके
रोटियों की चाह में ही,
सो गए हैं जो सदा को
एक व्याकुल आह में ही,
कौन देखे ? कौन रोए ? सड़ रहे मानव घरों मे !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन–मरण व्याकुल स्वरों में
कह रहा जग आज सारा,–
'न्याय क्या, अन्याय है
आज का शासन कहां
असहाय है, निरुपाय है ?'
ओ मरण के अस्थि पंजर

आज बल अपना दिखादो,
घोर विप्लव ही मचादो
आज सागर को हिला दो,
मौन है उच्छ्वास कह दो
आज उनसे, 'पुनः जागो !'
छीन लो अधिकार अपने
दीन बनकर कुछ न मांगो,
क्रूर अत्याचार जग के
साम्य के पथ से हटा दो,
तोड़ युग के पूर्ण बंधन
क्रांति की ज्वाला जला दो !
रूप ऐसा ओ प्रवर्तक ! आज हो लपटें करों में!
दग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में!
मंदिरों ने, मसजिदों ने
क्या किसी को भी बचाया ?
सांत्वनामय धैर्य इनका
क्या किसी के काम आया ?
धर्म के पोथे करोड़ों
सड़ रहे हैं नालियों में,
आज चाँदी के न टुकड़े
हैं प्रसादी थालियों में,
ईश पर विश्वास कैसा ?
कौन ले अवतार आया ?
ढौंग मंदिर, ढौंग मसजिद,
भूल यह, 'गुण गा न पाया।'
भाग्य का लेखा ? नहीं, वह

था यहां कवल बहाना
लूटना था, चूसना था,
या हमें उल्लू बनाना
हाय ! मानव अधमरे ही बह रहे हैं निर्झरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !

हो रहा है नृत्य पथ पर,
हो रहा रोदन कहीं पर,
बन रहे सुख-दुख भयकर
मूक है जीवन यहीं पर
कह उठेगी मूर्ख दुनिया
'विश्व का ही यह नियम है,
भाग्य में इनके लिखा था
ईश की लीला विषम है ।'
भूल है जो कह रहे यह,
स्वार्थ का संसार उनका,
चल रहा है यह युगों से
खोखला व्यापार उनका,
आज अंतिम दृश्य देखो
नाट्य घर बंगाल में आ,
जाग विप्लव, जाग नवयुग
अस्थि के कंकाल में आ,

आज धड़कन, आज कंपन हो बुभुक्षित के उरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !

नौ सैनिक विद्रोह

मचली हिन्द सागर में
सबल विद्रोह की लहरें,
हिन्दुस्तान को छूने
चली आती बिना ठहरे !

जब बंगाल की खाड़ी,
अरब सागर हिले डोले
सदियों के दमित सीने
नया दृढ जोश पा बोले !

लेंगे छीन आजादी
कि हममें शक्ति है इतनी,
लो प्रतिशोध युग-युग का
कि जुल्मों की कथा कितनी !

नौ सैनिक चले मिलकर
जहाजों को उड़ाने को,
भीषण गोलियां बरसीं
गुलामी को मिटाने को !

'गोरे' आततायी सब
छिप डरकर सभी भागे,
दुश्मन कौन था जो आ
सका बढ़ कर वहां आगे !

जन--जन मुक्ति--आन्दोलन
मशालें जल उठीं अगणित,
पशु-बल जा छिपा उल्लू
सरीखा बन भयातंकित !

नव--आलोक से सारी
दिशायें दम दमायीं थीं !
नूतन चेतना से सब
दिवारें डगमगायी थीं !

धक्का शक्तिशाली तब
लगा जन-तन्त्र का नारा,
सागर पार सिंहासन
गया हिल राज्य का सारा !

सड़कों पर पड़े अगणित
कदम फौलाद से दुर्दम,
जाग्रत देश के जन जन
अथक लड़ते रहे हरदम !

कीं कुर्बानियां तुमने
उठायी आंधियां भीषण
जिससे कट गये जकड़े
गुलामी के सभी बंधन !

लपटें जल उठी दुगनी
पड़ा जब जब दमन–पानी,
औ' प्रतिरोध भी दुगना
बढ़ा, की खूब मनमानी !

यह साम्राज्यवादी गढ
विकल हो बौखलाया था,
जिसने शक्ति का कण-कण
कुचलने में लगाया था !

लेकिन बुझ न पाई जो
वतन ने आग सुलगाई,
बरसों की बढ़ी जिसमें
पुरानी जुड़ गई खाई !

जय हिंद

हिंद फौज का स्वतन्त्र वीर
गिरि, समुद्र, वन विशाल चीर,
मृत्यु-द्वार-सी खिली समीर,

आफतें कठिन, चरण रुके न
पथ पर, सदा बढ़े प्रवीण !

मुक्त राष्ट्र का सप्राण गीत,
जागरण प्रकाश में अतीत,
पर्व है महान् यह पुनीत,

हिंद की विजय सही, जहान
रूप बन चला स्वयं नवीन !

विकल है देश

गुलामी से विकल है देश, यह निष्प्राण-सा सारा,
उदासी और असफलता, पलायन का हुआ नारा !
दुखी, ठंडी मरण सांसें, मलिन जीवन, अमित बंधन,
कुशित तन, नग्न मरणासन्न संध्यामृत-निराशा क्षण !
प्रगति अवरुद्ध, विपदा लक्ष, शोषण है, मनुज बंदी,
मिटा बिगड़ा समाजी तन, पतन की है लहर गंदी !
दशा युग की करुण है, आज वाणी मे नही बंधती,
नही बंधती, विषम है साधना स्वर मे नही सधती !
पड़ी कटु फूट आपस में नही है मेल किंचित भी,
निरंतर बढ़ रहे नव दल, विभाजन है नवीन अभी !
कहां जनता ? पड़ी निर्जीव सी बनकर, घिरा है तम,
निजी कुछ स्वार्थ में अंधे मनुज बस पूजते कि अहम !
सिपाही छोड़ दो आलस कहीं दुश्मन न खा जाए,
नहीं अब नींद के झोंके बुरी हालत न आ जाए !
तुम्हारे देश के दीपक बुझाए जा रहे है जब,
नजर के सामने लाकर मिटाए जा रहे है जब !
खड़े हो नाश के अन्तिम किनारे पर, सरल गिरना,
कि केवल एक धक्के से मिटा देगा यहां झरना !

साम्प्रदायिक दंगे

नगर-नगर व गांव-गांव में, दहक रही यह आग है,
डगर-डगर व पांव-पांव पर, भभक रही यह आग है !
कि आसमान चीरती हुई, विनाश की हवा चली,
हुआ अंधेर, लाल-लाल बन जहान, सृष्टि सब जली,
कराहती व चीखती सनी हुई यह रक्त से गली-गली,
मनुज विवेक हीन, हिंस्र, हो गया कठोर, जंगली !
कि खून आंख में, कटार का कटार में जवाब है,
कि बस, यहां स्वच्छंद मजहबी गंवार ही नवाब है !
न दीखती कहीं मनुष्य में जरा समीप लाज भी,
वही लिए कराल आदि जानवर शरीर आज भी !
असभ्य मद-प्रमत्त डोलती है हिंसकों की टोलियाँ,
मुलग रही असभ्य बेकसूर व्यक्तियों की होलियां !
जलन के दर्द में कराहती औ' कांपती वसुन्धरा,
कि आज एक बार फिर जगी चंगेज की परम्परा !
कि आज एक बार फिर उखड़ रहे हैं बेशुमार घर !
कि आज एक बार फिर दिलों में छा रहा निरीह डर.
उतर रहे हैं मौत घाट लाख-लाख बालकों के सर
कि खा रही पछाड़ विश्व मां लुटी हुई सिहर-सिहर !
मनुष्य रोष चित्र यह भयावना है किस कदर,
कि धर्म जाति गत प्रभाव का जहर उगल रहा गदर !
स्वदेश छोड अश्रु साथ ले ये चल पड़े हैं काफिले,
अनेक रोग ग्रस्त त्रस्त हैं, अनेक अंध जले !
कि रोक लो शहीद बन तमाम औरतों की आबरू !
महात्मा, पटेल, शेख, राष्ट्र-कर्णधार नेहरू !

रुको प्रगति, विकास और राष्ट्रीयता के दुश्मनो !
गुलाम वृत्ति अब नहीं, रुको स्वतन्त्रता के दुश्मनो !
तुम्हें कसम है चांद की, तुम्हें कसम है पाकतम कुरान की,
तुम्हें कसम जमीन की, तुम्हें कसम है आसमान की !
मदद करो निरीह की उठो न क्योंकि कर्बला के वीर हो,
अरब महान देश के बहादुरों उठो कि तुम अमीर हो !
शिवा-प्रताप की परम्परा के पुत्र तुम बदल गए,
महानता के स्वप्न को लिए हुए कहां फिसल गए ?
तुम्हीं वतन की शान को गिरा रहे, मिटा रहे,
कि हिन्द की उदार भावना स्वयं घटा रहे !
कि मेल से रहो, यही करीम और श्याम की पुकार है,
कि एक हिंद हो यही रहीम और राम की पुकार है !

आजाद मस्तक को उठा लेता

लूट हिंसा का मनुज पर जब नशा छाया,
रूप ले हैवान का मजहब उतर आया,
रक्त की इन्सान की यदि प्यास बुझ जाती
खत्म हो जाती बनी नेतागिरी माया !

इसलिए विद्वेष का झण्डा उठाया है,
कत्ल करने का घृणित नारा लगाया है,
मतलबी साम्राज्यवादी चंद लोगों ने
देश को मेरे कसाई घर बनाया है !

आग की लपटें गगन में घिर घहरती हैं,
जल रहे गृह रूह जन-जन की सिहरती है,
मौत की आवाज मनहूसी समाई है,
भूमि पर सरिता हलाहल की लहराती है !

आज तो गुमराह पागल झुंड मदमाते
शस्त्र ले फरसे छुरे हिंसक, चले आते,
दृश्य भीषण नाश का बर्बर मचाते जो
गीत पर अल्लाह या हनुमान का गाते !

मिट गए सब वृद्ध नारी शिशु व रोगी तक,
शर्म है जो छीन जीने का लिया है हक,
आततायी शक्ति ने हा क्रूर निर्दय बन
स्वार्थ के हित में मिटाये शांति के साधक !

भग्न, औ' वीरान कर डाले अनेकों घर,
यन्त्रणा निष्ठुर रुधे हैं आज भय से स्वर !
जल रहे धू-धू नगर सब ग्राम जीवित जन
चाहिये उजड़े हुओं को त्राण का अवसर !

क्या पता था देश का यह भाग्य आएगा !
दूर हो अंग्रेज बैठा मुसकराएगा !
काट डालेंगे गले लड़ आज आपस में !
हिंद की औलाद को यह रूप भाएगा !!

आंधियां बंगाल के नभ में उठीं थी जब
रोक लेना था मगध प्रतिशोध का विप्लव !
फिर न पड़ती देखनी पंजाब की पशुता,
और यह सीमान्त के निर्दोष मानव शव !

आज सड़कों पर खड़ी है मौत की दहशत,
नग्न भूखी राह में जनता पड़ी आहत,
क्षीण जर्जर त्रस्त दुर्बल उन्मना व्याकुल,
आत्म गौरव, आत्म वैभव नष्ट है आनत !

व्योम में उठती मुसीबत की किरण चमकी !
रक्त की छाया दिशाए लाल हो दमकीं,
फैसला है आज किस्मत की अनेकों का
ज्वाल बढ़ती जा रही है, जो नहीं कम की !

सृष्टि का संघर्ष क्षण प्रत्येक धड़कन का
स्नेह पावन से मिटा दो शेष मद रण का,
हो चुका नरमेध मानवता जगो गाओ !
मुक्ति का संगीत, आशा गीत जीवन का !

आज तो बेचैन अस्त व्यस्त है तन मन,
यह न होनी बात नाशक देख आयोजन!
गर्व से आजाद मस्तक को उठा लेता,
लड़ गया होता विषमता से कहीं जीवन!

दमित नारी

मिट्टी-मिट्टी बोल रही है !
बोल रही हैं नंगी काली ऊंची चट्टानें,
बोल रहे हैं सूखे-सूखे रक्तिम नाले.
चीख रही है सरिता-सरिता-
लानत है इंसान !
किया तुम्हींने नारी पर अत्याचार प्रहार,
लानत है युग-युग की चिर संचित संस्कृति,
जिसकी पशुता ने
नारी की अस्मत पर हाथ उठाया !
लानत है मजहब
जो बनता मानवता का पहरेदार,
जिसने दुर्बलता पर हावी हो,
आज किया मनमाना भक्षक व्यापार !
घृणित खुदा के बोल सभी;
क्योंकि केवल वे ही जिम्मेदार
कि जिनने जन-जन की नस में
भर दिया भयंकर विष
जो निकला फूट मनुजता की नींव हिला,
जिसकी आज विषैली ज्वाला
कोने-कोने में फैल गई है
मन के नैतिक बंधन जिसने ढीले कर डाले हैं !
सोच नहीं सकता कोई,
पागलपन के उठे बगूले
कांपी धरती, कण-कण कांपा,

आसमान से तारा-तारा कांपा,
पर, रुक न सका
हैवानों का चलता चक्र अरे !
जिसने नारीत्व धरा पर लुंठित कर,
माँ पर हाथ उठाया,
बना दिया विधवा-विधवा !
पुत्र विहीना !
घायल-घायल !
रो-रो सूख गये हैं जिनके आंसू,
सूख गए हैं केश कहीं खूनी धारों से,
सूख गए हैं होठ,
तुम्हारी निर्मम आवाजों से भयभीता नारी
गिन-गिनकर सांसें छोड़ रही है !
वह देश असभ्य, किए जिसने ऐसे काम,
वह इंसान नहीं हैवान,
पशु से भी बदतर है !
जिसने मातृत्व किया पद मर्दित,
नारीत्व किया अपमानित,
निर्बल से खिलवाड़ !

साम्प्रदायिक-विष

आज नूतन शक्ति का सचार !
नस-नस में फड़कता जोश
दुर्दम मानवी दृढ़ ।
होश की करवट,
कि देखा सामने मरघट
पड़ीं लाशें मनुज की,
चीत्कारें !
ध्वस्त गृह अट्टालिकाएं,
धूल उड़ती, नाश की चलती हवाए,
खून के सागर धरा पर बह रहे
ज्वालामुखी लावा उगलते,
हो रहा है मृत प्रलय,
ताण्डव प्रखर,
गिरते धरा पर शीश अगणित
वार से होकर पराजित,
अवनि लुंठित, चरण मर्दित,
थूक ठोकर से मसलता
आदमी जब आदमी को
तब जगे हैं प्राण !
उन्मद वेग ज्वाला
सर्व भक्षक क्रूर लपटें
आ गयीं जब खा गयीं जब,
युग-युगों की शक्ति,
संचित धन, मनुजता !

जो कभी सोचा न हो मन में
कभी देखा नहीं हो स्वप्न तक में,
क्रूर बर्बरता, हिलादे दिल !
जगत इतिहास के
सौ वर्ष तक के युद्ध
फीके बालकों के खेल
बन कर रह गए, उपहास !
होगा सच नहीं विश्वास
हिंसा का, मरण अतिरेक !
घिस गया चंगेज !
फीका पड़ गया तैमूर !
औ' औरंगजेबी जुल्म ढह
जलियानवाला बाग !!
हिंसक अतनायी
लोमहर्षक, क्रूर,
फैली रोशनी के सामने
'सरवर गुलामी' जुल्म !!

हम एक हैं

तूने कर दिया बरबाद
मेरे देश का वैभव
कि मेरे देश का गौरव !
मुझे है याद—
मेरी भूमि पर बहता कभी था
नीर–सा घी–दूध,
जैसे आज बहता
युद्ध के मैदान में पेट्रोल अथवा खून !
जन-जन तृप्त थे
निश्चिंत,
जीवन में सुखी !
पर, आज
तूने कर दिया मुहताज,
भूखों मार !
दुख, आतंक, गोलों और लोथों का
भरा भंडार !
लड़ते देश के बालक
झगड़ गोबर सरीखी चीज के ऊपर,
धृणित !
तूने जमाया पैर मां के वक्ष पर,
जिसके करोड़ों लाल
हिन्दू और मुस्लिम को लड़ाया,
फूट का बो बीज,
भू सम्पत्ति का विक्रय !

नया भावी मनुज,
जब नीति तेरी याद किंचित भी करेगा तो–
उबलकर क्रोध से अपने,
भरे प्रतिशोध ज्वाला,
दांत लेगा पीस !
अपने बाप–दादों की
मरण–सी बेवसी पर,
अश्रु की धारा बहाकर !
तोड़ देगा गर्व सब !
पर, आज तो ये आंख मेरी
देखती वह दृश्य–
जीवन मे
कभी भी स्वप्न तक में
जो न सकता सोच !
क्या मिट सभ्यता सारी गई ?
वर्षो हमारी साधना का, एकता का प्रयत्न,
सब साहित्य का वरदान,
मिट्टी हो गया ?
होना असम्भव है !
रुकेगी यह नहीं आवाज––
'सब इंसान जग के एक हैं ?
हम एक हैं !'

एकता

कर्बला प्रयाग है,
प्रयाग कर्बला !
कुरान वेद की नसीहतों से
व्यक्ति का करो भला !
टले अशुभ घड़ी
व मृत्यु भय बला !
कि जाति-द्वेष छोड़कर उठो,
कि धर्म-द्वेष छोड़कर उठो,
वतन की एकता के वास्ते,
वतन की नव स्वतन्त्रता के वास्ते !
महान हिंद की महानता बनी रहे !
उदार हिन्द की उदारता बनी रहे !
सभी दिलों की चाह जो
वही सतत किये चलो !
महान ध्येय के निमित्त तुम
जलो, जलो, जलो !

हिन्दू-मुसलमान

एक है सबका खुदा, जिसने बनाये जीव सारे !

खून की नदियां बहाकर
देश की रक्षा न होगी,
धर्म का ले नाम यों पथ-
भ्रष्ट मानवता न होगी,
सभ्यता का हार जिसमें
उच्च भावों को पिरोए
हैं युगों में कीमती मोती;
अनेकों प्राण खोए ।

एक होकर ही रहेंगे, हिंद तेरे जन-सितारे !
एक है सबका खुदा, जिसने बनाए जीव सारे !

भूत सिर पर छा गया
हैवानियत का क्रूर निर्दय
शक्ति का आव्हान कर
जागो मनुजता की कहो जय !
छोड़ संयम हो गए सब
क्रोध से हिंसक व निर्मम,
और भाई का गला भाई
गिराता, है यही गम,

याद करलो, उस खुदा को हैं सभी जन-प्राण प्यारे !
एक है सबका खुदा, जिसने बनाए जीव सारे !

संयुक्त बनो

अपने ही हाथों से अपने
हमने आज कुल्हाड़ी मारी,
गलती पर गलती कर आज
जुए में जीती बाजी हारी,
ले न सके हम वह जिसके पाने
के युग-युग से अधिकारी;
दिल टूक-टूक होता है, यह
निर्मम कितनी रे लाचारी !

मेरा देश बंटा है टकड़ों में अनगिन,
समझूं जन-जन की आजादी या दुर्दिन ?

आजादी हित हमने अगणित
अविराम महा बलिदान किए,
जलियांवाला कांड सहा औ'
ममता के बन्धन छोड़ दिए.
चुप कि कराह न उठने दी थी
पीड़ा के सारे घाव सिए,
विपदाओं के बादल हंस-हंस
हमने अपने ही शीश लिए,

पर, यह भारत माता तो आज अभागिन,
नाची है रणचण्डी आ क्रूर पिशाचिन !

सन उन्नीस सौ बयालीस उठाया
जनता ने आन्दोलन,
'भारत छोड़ो' के नारे पर
फांसी झूले आ मुक्त-तरुण,

पशुबल की गोली से हिल कांप
उठा था यह सम्पूर्ण गगन,
हम मतवाले थे आजादी
के अविचल निर्भय सैनिक बन;
जब जूझे दुश्मन से, हम मरते गिन-गिन!
विधवा होती जाती थीं, हाय सुहागिन!
जन-जन निर्भय हो अत्याचारी
अंग्रेजों से जूझा था,
बच्चों माता पत्नी और पिता
को डर न कहीं सूझा था,
वापस भग आने के कायरपन
को न किसी से पूछा था,
इनने अपने बीहड़तम पथ
को न किसी से झुक बूझा था,
निकलीं थीं बनकर अबलाएं अभिशापिनि.
कूदीं रण-ज्वाला में बनकर उन्मादिनि!
'लीगी' वाले भारत को अगणित
काफिर 'नीरो' सिध्द हुए;
जिनके कौमी प्रचार से एक
के सब पथ अवरुध्द हुए,
अतएव प्रगतिशील प्रखर जनबल
दुर्दम संस्कृत क्रुध्द हुए;
अच्छे और बुरे के फिर ऐसे
विनष्टकारी युध्द हुए
हावी होकर आया कटु ये' कसाईपन
मजहब का नंगा नाच हुआ खन-खन-खन!

निर्दयी बनी दीवानी, भोली
जनता औ' गुमराह बनी,
आपस में काट रहे आज गले
भूमि रक्त से हाय सनी.
ललकार उठा तब सरहद्दी
सूबा से पठान सिंह 'गनी',
हर जन-तन्त्र बसाने वाले
की छाती फूली और तनी,

गांधी, खान, जवाहर रोकेंगे क्रन्दन,
साम्प्रदायिकता का हो जग से आज मरण!

दिन दूर न होगा जब नक्शे
से खुद पाकिस्तान हटेगा,
ऊंचे ऊंचे भवन गिरेंगे
शोषण, पूंजीवाद मिटेगा
शक्तिमना अविजित उन्नत मेरा
यह हिन्दुस्तान बनेगा,
हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई
सबका है यह देश, जगेगा,

गले मिलेंगे भेद भूल कर ये जन-जन,
खिल जाएगा रे सूखा उजड़ा उपवन!

फिर हम देंगे जग को अपनी
नूतन संस्कृति का ज्योति दान,
सत्य, अहिंसा, औ' चर्खे का
गाएंगे हम उन्मुक्त गान,
फैलेगी सारे लोकों में
भारत की सुन्दर श्रेष्ठ शान

उठो-उठो अब ओ मेरे बन्दी
चिन्तित देश अमर महान !

अखंड, संयुक्त बनो ! मुक्त करो जीवन !
जर्जरता मिट जाए, आए नव यौवन !

विवशता में

विवशता की असह उन मूक घड़ियों में
गगन को चीरतीं आएं
तुम्हारे प्यार की किरणें !
कि फिर युग-युग पिपासित होंठ पर जग के
बहें मधु स्नेह के झरने !
मनुजता के पतन-निर्मित
अंधेरे के समय-पट पर,
गगन को चीरतीं आएं
तुम्हारे प्यार की किरणें !
बहा ले जा घृणा के तृण,
भरी झेलम, भरी गंगा !
क्षितिज से उठ रहीं लपटें,
हिमबर्बर विनाशी आपसी दंगा,
लुटेरा है खड़ा नगा !
कि काले मेघ आओ तुम
कि काले मेघ छाओ तुम,
बरस लो आज झर-झर-झर,
कड़क कर आततायी के
हृदय में आज भरदो डर,
गिरा करका,
ढहा दो सब अशिव के गढ़ !
अरे ओ ! त्राण के दुर्दम चरण, उठ-चढ़ ?
फिसलनी इन बड़ी ऊंची दिवारों पर,
समूची शक्ति के बल पर,

कि तेरे दृढ़ प्रहारों से
बुर्जें ढहने, सभी दीवार ये गिरने !
गगन को चीरतीं आएं
तभी निर्देश, पथ को दूर से करती हुई किरणें !
तभी बाहें उठे तेरी
सभी पीड़ित हृदय को गोद में भरने !
सदियां जाएगीं,
कि नदियां सूख जाएंगी,
धरा यह डूब जाएगी,
नयी धरती उभर कर शीघ्र आएगी,
मगर विश्वास है इतना—
विरासत में मिलेगी यह
तुम्हारी भूमि की संस्कृति,
इसे केवल न जानो इति ।

उठो ऐसा न हो मानव
भविष्यत् थूक दे तुम पर,
बनो मत मूक, पशुता के
चरण पर नत नहीं हो शीश !
यह आशीष—
दोनों ने दिया है—
शाप ने, वर ने ।
गगन को चीरतीं आएं
तुम्हारे प्यार किरणें !

युद्ध क्षेत्र पर

खंडहर है, खंडहर है, खंडहर !
शिलाएं टूटती भू पर !
भयंकर ध्वंस निर्मम,
धूम्र-तम है,
अग्नि की भीषण शिराएं लाल
इधर-उधर !
कि कर्ण परदा फाड़ता है स्वर ।
मिटाता साथ में सब
खेत, गृह, अट्टालिकाएं, जीर्ण कुटियाँ,
क्रूरता. विस्फोट,
बॉम्ब को पटक,
झपट लटक उतर पेराशूट से
ले शीघ्र निमम
नाश के कटु यंत्र,
ये सब भूत से बन मानवों के पूत,
खाकी वर्दियों में रौदते है
वक्ष दुनिया का ।
आंसू रक्त की है धार !
सारा लाल है संसार !
चारों ओर धुआँ धार !

देशी रजवाड़े

प्रतिगामी, जनता, के दुश्मन
जो जन-बल के सदा विरोधी,
जिनने जनता के शव पर चढ़
किया अभी तक चौपट शासन !

जन घोर उपेक्षा, लगा दिया
यहां जमीदारों का जमघट,
अंग्रेजों को शीश झुकाया
औ' भारत का अपमान किया !

राजा और नवाब विलासी
महलों में सुख के भर साधन,
फौज पुलिस के गुर्गों से जो
लगवाते जन-जन को फांसी !

खुद निश्चिन्त हमेशा रहते
उठता रहता है कहीं धुआं,
जलते गांव, उजड़ जाते, जन
अकाल, बीमारी को सहते !

करते रहते जो मनमानी,
अपने औ' पुरखों के फोटो
औ' स्टेच्यू पथ में लगवाते
पर, न लगी है झांसी की रानी !

एक नवाब बनाता मसजिद
आर्य समाज न बनने देगा,
धर्मों की संकीर्णता बढ़ी,
छीने हैं हक, यह कैसी जिद !

यह भारत जब आजाद हुआ
तब इनने भी यह ही चाहा;—
हम आज़ाद बने पर न पता
अंग्रेज़ मरा, बरबाद हुआ !

पनपा इनकी सीमा में बढ़
हिन्दू, मुस्लिम, हरिजन में घुस
जाति-पांति का भेद भाव रे,
ये प्रतिक्रियावादी दृढ़ गढ़ !

ये हिजड़े कायर लड़ न सके ।
जब अंग्रेजी राज बना था,
मुट्ठी भर गोरे बढ़ते थे
ये कर न सके कुछ, सिर्फ झुके !

चलती आयी अब तक सत्ता
संगीनों के, गोलों के बल,
अब न टिकेगा ताज कहीं भी
जाग उठा हर पत्ता-पत्ता !

'शेरे कश्मीर' बना हर जन.
ट्रावनकोर, हैदराबाद कि
भोपाल व कश्मीर शत्रु है—
अतएव करो जन-आन्दोलन !

फिर भारत में जनतन्त्र जगे !
जनता का राज बने ऐसा,
हिल न सके जब आयें झंझा;
ये ताज पटक कर शीघ्र भगें !

मलान सावधान

मिटी नहीं अभी मनुष्य की पशुत्व-वृत्ति,
ले रहा अशान्त श्वास जंगली हृदय मलान
रंग-भेद के बुझे हुए चिराग़ पर !
गए नहीं अभी समाज से विचार—
रक्त- पान के,
अपार लूट के, खसोट के,
'सुवर्ण' की विनष्ट शान के
मनुष्य के मनुष्य पर प्रहार मौत के !
असभ्य दासता प्रथा बनी रही,
'सुवर्ण' चाह
आज भी बना रही सवेग योजना,
गले पुकार कर रहे
अशक्त सृष्टि-स्वप्न घोषणा दहाड़ !
ले विनाश शस्त्र-बल शरण,
सहस्त्र राक्षसी चरण.
विषाक्त साथ में घृणा पवन,
अनीति ढोल
बन्द कर श्रवण
प्रमादवश बजा रहा, बजा रहा !
गुलाम विश्व के मिटे हुए असार चिन्ह फिर बना रहा !
जमीन पर न,
आसमान में किले बड़े-बड़े असीम कर रहा सृजन !
उबल रहा मलान का प्रखर सुधार श्वान- रक्त,
गॉड का मलान भक्त,

श्वेत-वर्ण-जाति का नवीन दूत
यह गलत कि वह मनुष्य बीच भूत
अजेय शक्ति उठ रही,
नवीन जिंदगी मचल रही,
विनाश का धुंआ
बिखर बिखर अनन्त में समा रहा,
विरोध-मेघ व्योम घेर कर लहर रहे,
मनुष्यता उतर रही,
नए समाज का विधान हो रहा !
बड़ा कठिन लकीर पीटना
वही पुराण जाति-भेद, रग-भेद की !
मलान सावधान !

अफसोस है

अफसोस है, अफसोस है !
उजड़ा हुआ संसार है,
रोदन यहां हर द्वार है,

बिगड़ा हुआ, पीड़ित, दुखी, मिटता हुआ समुदाय है !
अफसोस है अफसोस है !

भीषण क्षुधा की ज्वाल है,
सूखी जगत की डाल है,

अम्बर-अवनि में गूंजता बस एक ही स्वर, 'हाय है' !
अफसोस है, अफसोस है !

नीरस मनुज का गान है,
झूठा लिए अभिमान है

गतिहीन जीवन है जटिल, असहाय है निरुपाय है !

अफसोस है अफसोस है !

विरोधी शक्तियां

घेर रहा है जग को प्रतिपल,
उठता जड़ता का काला तम,
बढ़ता जाता है जीवन में,
अतिशय क्रन्दन, अतिशय विभ्रम,
छाते जाते अविरल नभ में,
काले, भयग्रस्त, अमा-से घन,
गतिहीन, अनियन्त्रित आज बना
निष्प्राणिक, अपमानित जीवन

रोक रहा है कौन उठा कर.
आज भुजा से जन का इंजन !
गति प्रेरक पहियों में, अवनति.
हित कौन रहा है भर उलझन ?
बर्फीले तूफानों में नर को,
धधका सेक रहा है—
कौन दिवाकर के मुख पर,
परदा, ढकने फेंक रहा है ?

किन पापों की रात क्षितिज से,
पथभ्रष्टा बन उतर रही है,
डाकन-सी प्रतिमा लेकर,
नवयुग की झोली कतर रही है,
कौन विरोधी-धारा फैली,
बस्ती पर आ दौड़ रही है,
कौन विरोधी आंधी नूतन,
दीवारों को तोड़ रही है ?

किसने इस क्षण आभा को,
कर म्लान, अंधेरे से मन जोड़ा,
अक्षय संचय जिससे रह-रह—
कर होता जाता है थोड़ा !
जूझो युग के सजग पथिक,
तुम थक जाने का अवसर न अरे,
नाविक ! विधि सोचो ऐसी,
जिससे यह युग-नौका आज तरे !

मिल मजदूर

लम्बी-लम्बी
चौड़ी-चौड़ी
हलकी नीली
कुछ मटमैली
गड्ढों वाली
टूटी-टूटी
डम्बर की सड़कें
रोज सबेरे तड़के
मीलों के उन
मजदूरों से
खूब खचाखच
भर जाती हैं !
अगणित नारी,
बालक नर
रोटी लेकर
हंस हंस कर
जल्दी-जल्दी
सिर्फ मशीनों की
घुनबुन में
बढ़ते जाते हैं
रोज कतारों में !
उस काले-काले
इंजन-सा ही
जिनका जीवन

धड़-धड करता
दौड़ रहा है !
किस्मत अपनी
फोड़ रहा है !
मैले-मैले
कपड़े पहने,
वे क्या जाने
कैसे गहने ?
कपड़ों के निर्माता
वैभव के निर्माता
पर अध नंगे
और अचानक
एक दिवस फिर
आतें भर कर
होकर जर्जर
भूखा नंगा
चल देता है
स्वर्ग पुरी को
बेहद मंहगा
जिसका बनता
मरघट का क्रम !
ऐसा मानव
बालों में भर
कानों में भर
रूई के कण,
आंखें मलकर
डगमग करता

बढ़ता जाता,
जीवन से डट
लड़ता जाता,
पर्वत छाती
चढ़ता जाता,
टीले उचे
खंदक नीचे
चलता जाता,
गरमी सरदी
वर्षा ओले
तन को खोले
औ 'बिन बोले
जीवन भर औ'
हंस-हंस कर
आघात निरंतर
भीषण तर
सहता जाता !
आबाद रहे
यह धरती भी
हर रोज भरें
ये राहें सब,
हर रोज छुए
यह धूल चरण
इन मानव के
इस महिमा पर !

शराबी

हमेशा देखकर जिसको किया करत मनुज नफरत
दुनियां में नहीं मिलती कभी जिसको जरा इज्जत,
पड़ा मिलता कभी मैली कुचैली नालियों के पास
कि जिसका जिन्दगी का ठोकरें खाता रहा इतिहास,

ऐसा आदमी केवल
शराबी है, शराबी है !

नहीं रहती जिसे कुछ याद दुनिया की लंगोटी की,
कि भर दुर्गन्ध जीवन की सदा हंसता हसी फीकी,
हमेशा चाटते रहते सड़क पर मुख अनेकों श्वान,
हजारों गालियां देते हजारों लोग पागल जान

ऐसा आदमी केवल
शराबी है, शराबी है !

शराबी को हमेशा काल पहल मौत आती है,
कि पहले फूलसी कोमल जवानी बीत जाती है,
हजारों व्यक्तियों में एक पैसे का बना मुहताज,
कि जिसकी भूल कर कोई कभी सुनता नही आवाज,

ऐसा आदमी केवल
शराबी है शराबी है !

शराबी से

मनुष्य हो अगर तो फिर शराब मत पिया करो !

तुम्हारे हाथ में भरा हुआ गिलास जो,
उसे समझ जहर तुरन्त आज फोड़ दो,
बुझा सके कभी न दिल की हाय प्यास जो
उसे गलीज व्यर्थ जान जल्द छोड़ दो,

मनुष्य हो अगर तो फिर नशा नहीं किया करो !
मनुष्य हो अगर तो फिर शराब मत पिया करो !

स्वतन्त्र जो बिना सुरा के शान से जिए,
शराब है बुरी सदा अमीर के लिए,
शराब है बुरी छुरी सदा गरीब के लिए,
शराब है सदा बुरी शरीर के लिए !

मनुष्य हो अगर तो सभ्यता के सामने डरो !
मनुष्य हो अगर तो फिर शराब मत पिया करो !

सोओ नहीं

सोओ नहीं, सोओ नहीं !
यह रात है दुख से भरी,
इस रात डूबेगी तरी,

तुम बाहुओं में शक्ति भर कर जागते निशि भर रहो !

इंसान हो तो भीत जीवन में कभी
होओ नहीं, होओ नहीं !
सोओ नहीं, सोओ नहीं !

यह रात काली है बड़ी,
पथ पर भुतनियां है खड़ीं,

तुम ज्वाल हाथों में लिए आवाज यह करते रहो–

अवसर प्रलय संगर प्रबल तुम भूलकर
खोओ नही, खोओ नहीं !
सोओ नहीं, सोओ नहीं !

निश्चिंत भी भयभीत भी

यह जिन्दगी जब दांव पर,
संघर्ष है प्रति पाँव पर,
यह भैरवी भी बज रही.
रुकना न सम्भव है कहीं
है हार भी, औ' जीत भी !
निश्चिन्त भी भयभीत भी !

हम सुन रहे हैं राग सब
अनुराग और विराग सब,
कोई बुलाता, लौट आ,'
कोई सजाता कह 'विदा !'
रोदन करुण भी, गीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

शिव में अशिव आभास भी,
पर यह बना विश्वास भी—
अभिशाप भी वरदान है,
मिट्टी बना ये महान है !
अपवित्र और पुनीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

ललकारता है कौन यह ?
पुचकारता है कौन यह ?
मानव विरोधी द्वन्द्व में,
मानव सदा आनन्द में !
यह शत्रु भी है मीत भी !
निश्चिन्त भी भयभीत भी !

जनवाणी

जो जन-जन के भावों और विचारों को वहन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

तम का छाया-नर्तन
आतंक भरा शासन,
जन-जागृति ज्योति-किरण
करती है निर्वासन,

जो हर अवरोधी सामाजिक ताकत का दमन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

शोषक-वर्ग भुजाए
नाशक तेज हवाए
मेघों अस्त्रों से कर
नव-शक्ति प्रहार प्रखर,

जो जन-बल के सम्मुख श्रध्दा आदर मे नमन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

उठते गिरते हरदम
नंगों भूखों का श्रम,
क्षण भर होकर आहत
पर, पा लेता कीमत,

जो सामूहिक पीड़ा, आंसू, क्रन्दन को सहन करे

वह जनवाणी !
वह युगवाणी है !

सुनकर उठते विप्लव,
बिछ जाते भू पर शव,
उठता ज्वाला भैरव,
गुंजित कर क्रन्दन-रव,

जो गिरती दीवारों पर नूतन जग का सृजन करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

वेग रुके जन बल का,
स्वर बनकर हलचल का,
छा जाता अम्बर में
धरती पर घर-घर में,

जो दुनिया की शोषित जनता का एकीकरण करे
वह जनवाणी है !
वह युगवाणी है !

बदलतायुग

लो बदलता है जमाना !

ज्वाल जग में लग गई है,
आग जीवन की नई है
जल रहा है जीर्ण जर्जर—टूट मिटता सब पुराना !
लो बदलाता है जमाना !

ध्वंस की लपटें भयंकर
छा रहीं सारे गगन पर
वेग अधुनाधुंध है जिसका असम्भव है दबाना !
लो बदलता है जमाना !

बढ़ रहा प्रत्येक जन-जन,
रोशनी में मुक्त कन-कन,
वास्तविकता सामने आई, न अब कोई बहाना !
लो बदलता है जमाना !

रोष इससे तुम करो ना,
द्रोह सांसे भी भरो ना,
यह सतत बढ़ता रहेगा, व्यर्थ कांटों को बिछाना !
लो बदलता है जमाना !

नया प्रकाश

नया प्रकाश है
नया प्रकाश !
दीप्यमान ओर-छोर
अंधकार मिट रहा अछोर घोर,
वास्तविक स्वरूप नग्न सामने ।
असंख्य क्षीण-दीन, जीर्ण शीर्ण भग्न
सामने खड़े हुए कतार में मनुज !
घुंआ-घुंआं घिरा !
कि आसमान में उड़े चले
ये जा रहे डरावने विशाल मेघ !
चीरता हुआ गगन
नवीन विश्व का नवीन शिशु
निकल समाज के प्रवीण रंगमंच को
निहार बढ़ रहा !
प्रकाश देख कांपती परम्परा,
प्रकाश देख डगमगा रहीं
सफल पुराण रूढ़ियां,
नवीन चेतना, नवीन भावना,
विचार नव्य-भव्य औ
नवीन आश है !
नवीन आश है !
नया प्रकाश है,
नया प्रकाश है !

आज तो

आज तो चली अजब हवा
दब गया दमन का दबदबा,
भय विहीन
है जमीन !

मात चाद की अरे कला;
शक्ति गीत गा रहा गला,
हर मलीन
है नवीन !

रूप है समाज का अजब,
हर मनुष्य है स्वतन्त्र अब,
ना अधान
है न दीन !

बदल रही है.....

बदल रही है आज हमारी
पहली नकली तस्वीर,
खाओ भूखों हलुआ पूरी
और गरम मीठी खीर !

बदल रही है आज हमारी
फटी पुरानी पोषाक,
अब न कटाना जग के सम्मुख
अपनी यह ऊंची नाक !

बदल रही है आज हमारी
डर की हलकी आवाज,
दूर बहुत ही दूर भगी है
अब तन की मन की लाज!

बदल रही है आज हमारी
यह जाड़ो मारी शॉल,
आज बनालो भैया अपनी
मोटी नव-चादर लाल !

मुस्कान के रंग

दुनिया के जिगर से जो उट्ठा था धुंआ
अब धहकते हुए शोलों में बदल गया !
आई थी जो आवाज कि पहले
अब उसका हर उतार-चढाव सब साज नया !
दिखता था समुन्दर की जो छाती पर !
'भाटे' का उतरता हुआ जल,
अब तेज बड़ी लहरों में पलट गया
बीत चुका, गुजरा हुआ कल !
चेहरे पर थी जो मूक मुसीबत की शिकन
लाखों अपमानों की जलन,
रोशन जिससे उन्मुक्त-गगन !

मेरे देश में.....

आज मेरे देश के आकाश पर
काली घटायें वेदना की घिर रही हैं !
कड़कड़ा कर गाज
टूटे, फूस-मिट्टी के
हजारों छप्परों पर गिर रही है !
और गहरा हो रहा है
जिन्दगी की शाम का फैला अंधेरा,
पड़ रहा चमगादड़ों का, उल्लुओं का,
मौत के सौदागरों का,
खून के प्यासे हजारों दानवों का,
जिन्दगी के दुश्मनों का
भूत की छाया सरीखा आज डेरा !
कर दिए वीरान
कितने लहलहाते खेत जीवन के
सुनाई दे रहे स्वर
दुख अभावों और क्रन्दन के !
करोड़ों मूक जनता आज भूखी है
विवशता के धुएं में
मुश्किलों से सांस लेती है !
किसी के द्वार पर दम तोड़ देती है !
कि निर्बल हड्डियों का
क्षीण पंजर छोड़ देती है !!

डूबे गांव, बढ़ी है बाढ़ !
नदी के कूल गए पथ भूल,
कि चारों ओर मचा है शोर !
सेठों के रक्षक-दल भागे
आगे-आगे,
बिड़ला-डालमियां ने धोती-कम्बल बांटे,
बनकर दान-दया के वीर !
चलाकर मीठे रस के तीर !
दिये हैं अपने घर के चीर !!!
कल जब बाढ़ बढ़ेगी और,
भगे-उखड़ों को नहीं मिलेगा ठौर,
तब ये बाहर आधे नंगे रहकर
अपनी बैठक दे देंगे सत्वर,
और स्वयं सो जाएंगे यों ही
खोल 'कला का रूम' गरम !
जल से भीग गए हैं खूब,
तभी तो कांप रही है देह,
नहीं उठते हैं आज कदम
लख कर पीड़ा गए सहम !
मज़लूमों की रक्षा हित
सेवा करने निकले,
बेदाग़ पहन कर कपड़े !
देने आश्वासन—
न डरो,

हम कर देंगे सभी व्यवस्था
विधवा-आश्रम खुलवा देंगे,
धीरे-धीरे सब का ब्याह करा देंगे !
मरे हुओं को गंगा-यमुना में
या लकड़ी-इंधन देकर पार लगा देंगे।
सच मानों, बेहद चिन्तित है प्राण,
हमारे कहते हैं अखबार
'अर्जुन, नवभारत, विश्वमित्र, हिन्दुस्थान' !

धरती की पुकार

उट्ठो युवकों !
धरती तुम से जीवन माग
जीवन तुमको देना होगा,
फिर चाहे
मोटी–मोटी हरियाली की लोई में
मुह–ढक कर सो जाना,
खेतों–खलिहानों के अथवा
गेहूं–चांवल के
सपनों में खो जाना !
पर, आज अभी तो जगना होगा,
पीली-पीली लपटों में तपना होगा,
आगे–आगे
लम्बे-लम्बे कदमों को रखना होगा,
पथ के कांटों की नोकों को
फौलादी पैरों की रैती से घिसना होगा !
आओ युवकों !
धरती तुमसे धड़कन मांग रही है ।
बदले में जितनी चाहो तुम
उसकी ज्वाला ले सकते हो,
पर अपने प्राणों की धड़कन
उसमें भरनी होगी !
यदि मृत्युंजय बनकर रहना है
यदि निर्भय अन्तर की बातें कहना है,
तो इस क्षण
अपने से ऊपर उठना होगा

फिर चाहे
हसती दुनिया की तस्वीर
बनाने में जुट जाना,
भूखों–नंगों को
अपनी बाहों में भर लाना !

मालवा में अकाल

अकाल-ग्रस्त मालवा !
हताश जन, निराश जन
भूख, भूख, भूख !
नष्ट हो गई फसल.
दर असल ?
दूर-दूर से चले ये आ रहे
गांव के कुटुम्ब के कुटुम्ब,
और यह अवन्तिका नगर
कि कालिदास की विशाल कर्म-भूमि
घिर गई अकाल से !
दैत्य भूख का खडा हुआ अकड़,
खोल सर्व-भक्ष मु
पर अकाल है गरीब के लिए,
दर्द, भूख, त्राम, दुःख है गरीब के लिए.
मिट रहा अशक्त सिर्फ वर्ग यह !
सेठ के मकान में भरा अनाज है,
जमीनदार के मकान में भरा अनाज है,
कौन जीव एक जो उदास ?
घूमते निर्बन्ध मूर्ख से कठोर
लाल-लाल दांत पान से रँगे बता रहे
समूह के समूह का निकाल रक्त पी चुके !
सफेद वस्त्र सूक्ष्म तार-तार से बना पहन
एक क्या अनेक कह रहे—
'कि मिल रहा न ज्वार, बाजरा।'

गेहुं से भरी उठी बढ़ीं
व पाप की हराम की कमीन तोंद ले !
(विषम प्रयास स्वाभिमान का)
उठो किसान औ' मजूर
एकता तुम्हें बुला रही,
अकाल ग्रस्त त्रस्त जब
समस्त मालवा !

अमन की रोशनी

युध्द-अन्धकार-वक्ष फाड़
जगमगा रही नवीन शांति की किरण !
जंगखोर—शक्ति के
तमाम व्यूह तोड़
बढ़ रहे सशक्त विश्व के चरण !
आसमान में असंख्य हाथ उठ रहे
कि हम बिना
समस्त युध्द-सर्प-दंश काटकर,
व बर्बरों के हाथ से
सरल, सुशील सभ्यता-वधू निकालकर
न चैन से कभी भी बैठ पाएंगे !
असंख्य दृष्टियां लगी हुईं
नवीन युग की राह पर,
कि हम
बिना प्रभात के हुए
व तामसी-निशा विनाश के हुए
(नहीं-नहीं !)
अपार नींद के समुद्र में
कभी न डूब पाएंगे !
क्योंकि बध्द-द्वार युध्द-दुर्ग के खुले,
व शक्ति के प्रहार से
तमाम अस्त्र-शस्त्र ध्वस्त हो रहे !
जंगबाज
(जो कि विश्व का उलूक-वर्ग है)
अमन की रोशनी से त्रस्त हो रहे !!

जंगबाज

लड़खड़ा रहे तमाम जंगबाज,
टूटकर बिखर गया
कुचाल-साज !
जागरूक विश्व ने दिया रहस्य खोल,
असलियत बता रहा मनुष्य
पीट ढोल !
चोर और मुफ्तखोर बौखला रहे,
सत्य और नेक नीयती बता रहे—
कि खून हम बहा रहे
किसी न स्वार्थ-सिद्धि के लिए,
वरन्
स्वतन्त्रता, विकास, लोकतन्त्र के लिए,
पर, प्रकट हुए वही
अभाव रोग कोढ़
मौत ग्रस्त भुखमरी
अनेक आफतें बुरी-बुरी
सदैव ही रहीं घिरीं
समझ गया हरेक व्यक्ति आज
ये तभी
तमाम लड़खड़ा रहे हैं जंगबाज

जिन्दगी कैसे बदलती है

यह झोपड़ी है फूस की,
जिसकी पुरानी भग्न दीवारें,
व आधी छत खुली
इस रात में
जो है बड़ी ठंडी
खड़ी है मौन, तम से ग्रस्त !
उसमें ले रहे सांस
कोई तीन प्राणी,
हार जिनने आज तक किंचित न मानी !
भूमि पर लेटे हुए,
गुदड़ी समेटे और गठुर से बने
निज ज्वाल-जीवन से हरारत पा
कुहर के बादलों में
गर्म सांसें छोड़ते हैं ! !
और उसका शक्तिशाली उर
दबाकर भेदते हैं ! !
भग्न यदि दीवार हैं
पर, भग्न आशा है नहीं !
विश्वास धूमिल
और दृढ़ आवाज बंदी है नहीं !
कल देख लेना
जिन्दगी कैसे बदलती है !

नई नारी

तुम नहीं कोई पुरुष की
जर खरीदी चीज हो,
तुम नहीं आत्मा-विहीना सेविका
मस्तिष्क हीना—सेविका,
गुड़िया हृदयहीना
नहीं हो तुम वही युग-युग पुरानी
पैर की जूती किसी की.
आदमी के कुछ मनोरंजन-समय की वस्तु केवल !
तुम नही कमजोर,
तुमको चाहिए ना सेज फूलों की !
नहीं मझधार में तुम
अब खड़ी शोभा बढ़ातीं दूर कूलों की !
अब दबोगी तुम नहीं
अन्याय के सम्मुख,
नई ताकत, बड़ा साहस
जमाने का तुम्हारे साथ है !
अब मुक्त कड़ियों से तुम्हारे हाथ हैं !
तुम हो न सामाजिक न वैयक्तिक
किसी भी कैदखाने में विवश,
अब रह न पाएगा
तुम्हारे देह—मन पर
आदमी का वश
कि जैसे वह तुम्हें रक्खे रहो,
मुख से न अपने भूल कर भी कुछ कहो !
जग के करोड़ों आज युवकों की तरफ से

कह रहा हूं मैं—
'तुम्हारा 'प्रभु' नहीं हू,
हां, सखा हू !
और तुमको सिर्फ अपने
प्यार के सुकुमार-बंधन में
हमेशा बांध रखना चाहता हूं !!

मुक्ति-पर्व

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हमारे चरण से
बंधी शृंखला दासता की
तड़क कर अवनि पर गिरी थी,
व सारे जगत् ने
बड़ी तेज आवाज जिसकी सुनी थी
कि जिससे
सभी भग्न सोए हुओं की
थकी बंद आंखें खुली थीं
व हर आततायी के पैरों की धरती हिली थी !
बुभुक्षित व शोषित युगों ने
नवल आश-करवट बदलकर
बड़ी सांस लम्बी भरी जो
कि भय से उसी क्षण
सुदृढ़ देश साम्राज्यवादी सहम कर
मरण के कदम पर गिरे,
और खोए
समय की सबल धार में
क्योंकि निश्चय—
किसी पर किसी भी तरह
आज छाना कठिन है !
किसी को किसी भी तरह
अब दबाना कठिन है !
नई आग लेकर यह जागा तरुण !

विरोधी जमाने से लड़ना ही
जिनकी लगन है !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हटा आवरण सब
हमारे गगन पर
नई रोशनी ले नया चांद आया,
अंधेरी दिशा चीर कर जगमगाया;
बड़ा आत्म-विश्वास लाया—
नहीं यह तिमिर अब घिरेगा,
न आँखों पर परदा प्रलय का गिरेगा,
न उर-वेदना रात-भर नृत्य करती रहेगी,
नही दुःख की और नदियां बहेंगी !

उभरती जवानी नई है !
वतन की कहानी नई है !
रुकावट सहायक बनी है,
प्रखर युग रवानी यही है !
विजय की निशानी यही है !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन नई जिन्दगी ने
सहज मुसकरा मुग्ध चूमे हमारे अधर थे !
खुले कोटि अभिनव प्रबल मुक्त स्वर थे !
मनाई थीं हमने
विभा-ज्ञान-त्यौहार खुशियां,
स्वयं आन तकदीर नाची.

व हम गा रहे थे !
कि दुनिया के सम्मुख
बड़ी तेज रफ्तार से बढ
भगे जा रहे थे !
शिराओं में लहरें नए खून की भर ।
निडर बन
सहारे बिना
और देशों को लड़ने की ताकत
दिए जा रहे थे !
पुराने सभी घाव घातक
सिए जा रहे थे !
नई भूमि पर
एक नव शांत बस्ती
बसाए चले जा रहे थे !
करोड़ों सजग औरतों के नयन थे,
करोड़ों सबल व्यक्तियों के चरण थे,
कि जो देश का चेहरा सब
बदलने खड़े थे !
बुरी रीतियों से
कड़ी आफतों से लड़े थे !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हमारी हरी भूमि पर
फूल नूतन खिले थे !
व बरसों के बिछुड़े हुये फिर मिले थे ।
युगोंबध्द सब जेलखाने खुले थे !
कि हंसते हुए विश्व-स्वाधीनता के सिपाही

विजय गान गाते
सुखद सांस भर आज बाहर हुए थे !
अनेकों सुहागिन ने जिस दिन को लाने
स्वयं मांग सिन्दूर पोंछा
वही यह दिवस है !
वही यह दिवस है !
सफल आक्रमण का,
अथक त्याग, बलिदान, आन्दोलनों का,
जगत् जागरण का,
क्षुधित नग्न पीड़ित जनों का,
दबी धड़कनों का !

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४	१६	छिप	छिपे
१५	६	लब	जब
२१	१३	लहराती	लहरती
३२	२५	झले	झूले
३६	१४	ाहम	महा
३७	१३	सस्कृात	संस्कृति
३७	२३	प्यार किरणें	प्यार की किरणें
४४	६	निष्प्राणिक	निष्प्राणित
४५	५	जझो	जूझो
४६	६	गद्दों	गद्दों
४७	१४	ग्रातें	ग्राहें
४६	३	दुनिया	कि दुनिया
५१	१	सोग्रा	सोग्रो
५६	१८	सफल	सकल
५८	७	पोषाक	पोशाक
५६	१० के बाद(एक पंक्ति छूट गई)ग्रब मुसकान के रंगों की च		
६३	३	मांग	मांग रही है
६६	८	रहे सांस	रहे हैं सांस